पिंजर फिल्म में स्त्री–संदर्भ से ‘परिवार’ संस्था का विश्लेषण

हनुमत लाल मीना

भारतीय सिनेमा में स्त्री को केन्द्र में रखकर अनेक फिल्मों का निर्माण हुआ है। जिनमें **‘मदर इंडिया’, ‘दामिनी’, ‘रूदाली’, ‘चिंगारी’, ‘बैंडिट क्वीन’, ‘जुबैदा’, ‘क्या कहना’, ‘बवंडर’, ‘मातृभूमि’, ‘लज्जा’,** व **‘डोर’** प्रमुख है इसी कड़ी में हम डॉ. चन्द्रप्रकाश द्विवेदी द्वारा निर्देशित फिल्म ‘पिंजर’ (2003) को रख सकते हैं। डॉ. चन्द्रप्रकाश द्विवेदी के अनुसार– ‘वास्तव में इस फिल्म की कहानी दो लड़कियों के बारे में है, एक वह जो विभाजन से पहले दु:खद जीवन व्यतीत करती है और दूसरी विभाजन के बाद। इसमें भारत–पाक सीमा के निकट के गाँवों में नारकीय जीवन व्यतीत करने वाली उन हजारों औरतों के बारे में है जिनका साम्प्रदायिक व राजनीतिक संघर्ष के दौरान अपहरण एवं बलात्कार किया गया।

‘पिंजर’ फिल्म अमृता प्रीतम द्वारा रचित उपन्यास ‘पिंजर’ पर आधारित है। ‘पिंजर’ उन चुनिंदा फिल्मों में से है जिनमें साम्प्रदायिकता, धर्म व राजनीति की आड़ में दु:ख झेलती स्त्री की स्थिति को प्रकट किया गया है यह एक ऐसी सच्चाई है जो भारत–पाक विभाजन के दौरान प्रकट हुई। ‘पिंजर फिल्म की कहानी पंजाब प्रांत के छोटे से गांव छत्तोआनी से संबंधित ह जहाँ पर पूरो (उर्मिला मातोंडकर) अपने परिवार के साथ रहती है पूरो का परिवार समृद्ध तथा खुशहाल था। पूरो के तीन बहिनें एवं एक भाई था। पूरो को अपने घर में बड़े ही लाड़ प्यार से रखा जाता था। इसका अंदेशा इससे लगाया जा सकता है कि जब पूरो के भाई को पैसों की जरूरत रहती थी तो वह अपनी बहन से कहता था कि अपने कंजूस बाप से थोड़े रुपये दिलवा दे। पूरो की मांग को उसके पिताजी पूरी करते थे। वह उनकी चहेती बेटी थी। अब पूरो जवान हो गई थी। उसकी सगाई पास ही के गांव में कर दी गई। इस अवसर पर एक महिला पूरो से कहती है कि

‘जितना उड़ना चाहती है बिटिया उड़ले, ससुराल में इतना नहीं उड़ पाएगी।’

इस कथन से स्पष्ट होता है कि स्त्री का ‘परिवार’ संस्था में रूप परिवर्तित होता है। जब वह अपने पिता के घर में रहती है तो पूर्णतया स्वतंत्र होती है, लेकिन जब वह स्त्री विवाह के उपरान्त अपने ससुराल चली जाती है तो उसकी स्वतंत्रता पर पाबंदी लग जाती है यह ‘परिवार’ संस्था ही है जो कि स्त्री के लिए ऐसे नियम बनाती है तथा उसे अहसास दिलाती रहती है कि स्त्री बिना परिवार के अपना जीवन सही तरीके से व्यतीत नहीं कर सकती। स्त्री पर परिवार के अंदर ही अनेक जुल्म होते हैं लेकिन वह उनको चुपचाप सहती रहती है। अर्थात् स्त्री ही ‘परिवार’ संस्था के निर्माण में दु:ख झेलते हुए भी सहायता देती है। स्त्री को विवाह के बाद अजनबी लोगों के साथ रहना पड़ता है। अपने परिवार से बिछुड़ने का दर्द एक स्त्री ही जानती है। अपन परिवार वालों की इच्छा से ही उसका विवाह तय किया जाता है। परिवार में उसकी हाँ या ना का कोई महत्व नहीं रहता फिल्म में पूरो गाती है कि–

“हम तो बाबुल तोरे खूँटे की गइया, जित–चाहे उत बाँध दे।”

पूरो के विवाह के दिन नजदीक आ गये थे, उसे कुछ ही दिनों बाद अपने ससुराल जाना था। पूरों अपने परिवार से बिछुड़ने वाली थी। इसी बिछुड़न के कारण पूरो की मा¡ दु:खी थी। फिल्म के एक दृश्य में पूरो की मा¡ का दु:ख इस तरह व्यक्त हुआ है–

चरखा चलाती मां, धागा बनाती मां, बुनती है सपनों के खेस रे
समझ न पा मैं, किस को बता मैं, बइया छुड़ाती तू देस रे
बेटों को देती है महल अटरिया, बेटी को देती परदेस रे
जग में जन्म क्यूं लेती है बेटी, हाय क्यूं विदाई वाली रात रे। ,

इससे स्पष्ट होता है कि परिवार में बेटे–बेटी को समान नहीं माना जाता। एक परिवार संस्था वह है जिसमें पिता की सम्पति और घर पर सिर्फ बेटे का अधिकार माना जाता रहा है और वही परिवार संस्था बेटी को पराये घर जाने के लिए मजबूर कर देती है। पूरो की मा¡ इस बात से बहुत दु:खी है क्योंकि वह भी एक स्त्री है, उसने भी उस दर्द को झेला है जिसको की पूरो अब झेलने वाली है लेकिन वह यह सब जानते हुए भी चुप है और इस प्रक्रिया में प्रतिरोधक की बजाय सहायक की भूमिका निभा रही है।

जब रशीद (मनोज वाजपेयी) पुरानी खानदानी रंजिश के कारण पूरो का अपहरण कर लेता है तो पूरो के पिताजी रशीद के चाचा की धमकी के कारण चुपचाप घर में बैठ जाते है और अपनी बेटी की मुक्ति के लिए कोई प्रयत्न नहीं करते। पूरो के माता–पिता अपनी बेटी को अपने लिए मरा हुआ मान लेते हैं घर आने पर जब पूरो के भाई त्रिलोक को इस बात का पता चलता है तो वह पूरो को ढ्¡ढने की कोशिश करता है लेकिन अपने माता–पिता क समझाने पर वह भी चुप हो जाता है क्योंकि यहा¡ पर एक बेटी के जीवन की बजाय पारिवारिक प्रतिष्ठा की ज्यादा चिंता है पूरो के परिवार वाले अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए पूरो को मरा हुआ मान लेते है। तथा इसके लिए पूरो के भाग्य को ही जिम्मेदार ठहराते है फिल्म क इस दृश्य के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज में माता–पिता द्वारा अपनी बेटी की जिंदगी के बजाय परिवार के मान–सम्मान को अधिक महत्व दिया जा रहा है जिसका चित्रण फिल्म में इस प्रकार हुआ है–

पूरो का पिता	–	कहा¡ जा रहा है तू?
पूरो का भाई	–	थाने।
पूरो का पिता	–	पागल हो गया है तू।
पूरो की मा¡	–	बेटा एक बार घर में मेंहदी–हल्दी रच जाती है तो विवाह टल नहीं सकता। यही रिवाज है। अब चाहे छोटी की ही करनी पड़े, इस घर से डोली जरूर निकलेगी।
पूरो का भाई	–	मा¡, तुम किसके विवाह की बात कर

रही हो!

पूरो का पिता – मर गई पूरो, अब कौन उससे विवाह करेगा, कहा¡ उसे सारी जिन्दगी उठाता फिरू¡गा। तीन बेटियों का बाप हू¡ मैं, एक तो गई अपने भाग्य से, इन दोनों का क्या करू¡गा। अरे, जिसकी बेटी उठा ली जाती है उसकी इज्जत उठ जाती है, अगर आज इसके हाथ पीले नहीं किये तो कल हमारे घर की तरफ कोई आ¡ख उठाकर भी नहीं देखेगा।

उधर पूरो अपने परिवार से बिछुड़ने के कारण शरीर से कमजोर हो चुकी है। उसका रोना कोई नहीं सुनता। एक रात वह रशीद की कैद से भागकर अपने घर आ जाती है तथा माता-पिता से लिपट जाती है। लेकिन उसके माता-पिता उसे उलाहना देते है और उसे वापस जाने के लिए मजबूर कर देते है। ऐसे में उसका अपना परिवार ही उसके लिए पराया हो जाता है। अंततः हारकर वह वापस रशीद के पास चली जाती है फिल्म के इस दृश्य में दिखाया गया है कि जब पूरो अपने घर वापस आती है तो उसके माता-पिता उससे कहते हैं कि-

पिता – लोग इकट्ठा हो जायेंगे, बेटी तेरी किस्मत अब हमारे पास कुछ नहीं। कुछ देर में शेखों के लोग यहा¡ आ जायेंगे और हमें मार डालेंगे।

पूरो – बाबूजी, मुझे अमृतसर ले चलो।

पिता – कहा¡ रखेंगे हम तुझे, कौन तुझसे विवाह रचायेगा, तेरा धर्म गया, जन्म गयां हम इस समय कुछ बोले तो हमारे लहू की एक बू¡द भी नहीं बचेगी।

पूरो – मुझे मार डालो मा¡।

पूरो की मा¡ – तू जन्म की मर गई होती, अब यहा¡ से चली जा। बेटी, जा। हमने तुझे जन्म दिया है, हम पर इतना अहसान कर दे।

इस फिल्म में पूरो के अलावा एक स्त्री-पात्र लाजो है जो कि पूरो की भाभी है उसका भी अपहरण कर लिया है और उसे अपने ही पिता के घर में कैद करके रखा जाता है। वह गुससुम तथा दुःखी रहती है। जब पूरो उसे ढू¡ढते हुए वहा¡ पहु¡चती है तो लाजो उससे लिपट जाती है-

पूरो – तू लाजो है ना, मरी भाभी।

लाजो – तू पूरो है ना। (कहकर लिपट जाती है)

पूरो – देख लाजो संभलकर बैठ जा कोई आ जायेगा, लाजो मेरी बात सुन।

लाजो – मैं कुछ नहीं जानती तू मुझे अपने साथ ले चल, मुझे भगाकर ले

चल, मैं सारी उम्र तेरी दासी बनकर रहू¡गी।

पूरो – ऐसे भगाकर तुझे कहा¡ ले जाओगी?

लाजो – मैं नहीं जिÅ¡गी, मैं तड़प कर मर जाÅ¡गी।

इस फिल्म में साम्प्रदायिकता और विभाजन की आड़ में प्रत्येक जगह स्त्री का शोषण होता है। उसे दर–दर भटकने के लिए मजबूर किया गया। जब पूरो खेतों से आ रही थी तो उसे गन्ने के खेत में एक लड़की मिली। वह उसे अपने घर ले आती है और उससे पूछती है कि वह खेत में कैसे आई। ऐसे में लड़की रोती हुई कहती है– 'पास के गा¡व में कैम्प लगा हुआ था। गा¡व के सारे हिन्दू इकट्ठा हो गए थे। इन्तजार कर रहे थे कि कब मिलिट्री वाले उन्हें हिन्दुस्तान ले जायेंगे। मिलिट्री कैम्प की रखवाली करती थी, लेकिन देर रात कुछ मुसलमान कैम्प की जवान लड़कियों को उठा ले जाते थे और सुबह वापस छोड़ जाते थे। नौ रातें हो गई, मुझे हर रात नये–नये लोगों के घरों में जाना पड़ा। पिछली रात मुझे ले जाने वाले को चकमा देकर भाग आई। सारा दिन गन्ने के खेत में लुका–छिपी करके बिताया। इसको सुनकर पूरो कहती है कि इस युग में लड़की का जन्म लेना ही पाप है।

'पिंजर' फिल्म में स्त्री संदर्भ से 'परिवार संस्था' का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि पूरो को अपने परिवार में बड़े ही लाड–प्यार से रखा जाता है लेकिन पूरो का अपहरण होने पर वही परिवार उसके लिए पराया हो जाता है उसके मा¡–बाप उसे वापस रशीद के पास लौटने के लिए मजबूर कर देते है। वही दूसरी तरफ रशीद है जो कि पूरो का अपहरण करके भी उससे निकाह करता है तथा पूरो को खुश देखना चाहता है। पूरो का अब अपना अलग परिवार है जिसमें पूरो, रशीद एवं एक छोटा–सा बच्चा है जिसे पूरो और रशीद अपना लेते हैं। लेकिन धर्म के ठेकेदारों को यह रास नहीं आता और वे उस लड़के को पूरो से छीन ले जाते हैं, क्योंकि उस लड़के की मा¡ पगली हिन्दू थी। पूरो इस घटना से बहुत दुःखी होती है और महसूस करती है कि उसका परिवार एक बार फिर टूट गया। ''परिवार को समाज में सबसे पवित्र और स्वाभाविक सम्बन्धों की महत्वपूर्ण इकाई माना जाता रहा है फिर भले ही ये पारिवारिक संबंध संतान तथा माता–पिता के बीच हो या फिर पति–पत्नी अथवा भाई–बहन के बीच हो। इन संबंधों से मानसिक सुरक्षा, देखभाल, अपनत्व, हैसियत तथा सामाजिक पहचान मिलती है इसके साथ ही महिलाए¡ चाहे वे जवान हो या वृध, उनके ठोस अनुभव बताते हैं कि परिवार और समाज कुल मिलाकर गैर बराबरी, दबाव, उत्पीड़न और हिंसा के दायरे रहे हैं और आज भी है जिनमें स्त्री–पुरुष भेद, उम्र द्वारा निर्धारित हित अंतर्निहित होते है। स्त्री–जीवन का सबसे कठिन दौर तब होता है जब युवती होने के कारण उन्हें बिल्कुल अजनबियों के बीच अपना घर बनाना पड़ता है।